लैटर्स पेटेन्ट अपील

समक्ष मुख्य न्यायमूर्ति हरबंस सिंह और न्यायमूर्ति बाल राज तुली माननीय न्यायमूर्ति

भारत संघ,'इत्यादि., -अपीलार्थी।

बनाम

लछी रैम, ,'इत्यादि- उत्तरदाता।

लेटर्स पेटेंट अपील नं. 1970 का 303।} 17 जुलाई, 1972

निकासी ब्याज (पृथक्करण) अधिनियम (1951 का LXIV)-धारा 20-संपत्ति-चाहे समग्र हो या नहीं-सिविल न्यायालयों का अधिकार क्षेत्र-चाहे अपदस्थ किया गया हो-परिसीमा अधिनियम (1908 का IX)-धारा ^-किसी व्यक्ति के कथन के संदर्भ में राजस्व अधिकारी का आदेश-क्या उस व्यक्ति द्वारा पावती के बराबर है निकासी ब्याज पृथक्करण अधिनियम 1951 की धारा 20-संयुक्त संपत्ति के किसी भी दावे का निर्णय सक्षम अधिकारी द्वारा किया जाना है और सिविल या राजस्व न्यायालय द्वारा नहीं। यह धारा यह निर्धारित नहीं करती है कि क्या कोई संपत्ति संयुक्त है या दंगा है, यह भी अकेले उक्त अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा तय किया जाना है और कोई भी नागरिक या राजस्व न्यायालय संपत्ति के चरित्र के संबंध में किसी भी मुकदमे या कार्यवाही पर विचार नहीं कर सकता है। इसलिए, यह तय करने के लिए कि कोई संपत्ति समग्र है या नहीं, सिविल न्यायालय के न्यायशास्त्र को समाप्त नहीं किया जाता है।
(Para 5)

अभिनिर्धारित किया गया कि एक कथन जिस पर धारा 19, परिसीमा अधिनियम, 1908 के अधीन पावती का अभिवचन स्थापित किया गया है, वचन के बराबर नहीं है और देयता की सटीक प्रकृति या विशिष्ट चरित्र को इंगित करने की आवश्यकता नहीं है। हालाँकि, यह वर्तमान उप-विद्यमान दायित्व से संबंधित होना चाहिए और पक्षों के बीच न्यायिक संबंध के अस्तित्व और ऐसे न्यायिक संबंध को स्वीकार करने के इरादे को इंगित करना चाहिए। इस तरह का इरादा स्पष्ट शब्दों में होने की आवश्यकता नहीं है और प्रवेश की प्रकृति और आसपास की परिस्थितियों से निहितार्थ से अनुमान लगाया जा सकता है।
(Para 8)

अभिनिर्धारित किया गया कि किसी व्यक्ति के कथन का निर्देश करने वाले राजस्व अधिकारी के आदेश को उस व्यक्ति द्वारा दायित्व की स्वीकृति नहीं कहा जा सकता है क्योंकि उस पर उसके हस्ताक्षर नहीं हैं। ऐसा आदेश अधिनियम की धारा 19 के अर्थ के भीतर एक पावती नहीं है।

(Para 6)

लेटर्स पेटेंट माननीय मुख्य न्यायमूर्ति श्री मेहर सिंह की डिक्री से अपील, दिनांक 16 सितंबर, 1969, R.S.A में पारित। 1894/59, श्री बी. एल. मल्होत्रा, वरिष्ठ उप-न्यायाधीश की 2 नवंबर, 1959 की संवर्धित अपीलीय शक्तियों को उलटते हुए, जिसने 26 दिसंबर, 1958 को श्री ओ. पी. सिंगला, उप-न्यायाधीश, द्वितीय श्रेणी, गुड़गांव की पुष्टि की (वादी के वाद को खारिज करते हुए) और वाद के वादी को संपूर्ण व्यय सहित डिक्री प्रदान करते हुए अभिनिर्धारित किया कि वे वाद में निर्दिष्ट संपत्ति के स्वामी हैं क्योंकि उन्होंने प्रिस्क्रिप्शन द्वारा इसका अधिकार अर्जित कर लिया है, जिसे गिरवीदारों द्वारा 1937 तक 60 वर्षों के भीतर कम नहीं किया गया है।
अपीलार्थियों की ओर से अधिवक्ता एम. एस. जैन।
उत्तरदाताओं के लिए पी. एस. जैन और वी. एम. जैन, अधिवक्ता।
न्यायालय का निर्णय इस प्रकार दिया गयाः- न्यायमूर्ति तुली, मुख्य न्यायमूर्ति मेहर सिंह, 16 सितंबर, 1969 के फैसले और डिक्री से लेटर्स पेटेंट के खंड 10 के तहत इस अपील को जन्म देने वाले तथ्य ये हैं।

(2) वर्ष 1877 से कुछ समय पहले वाद में भूमि सरकारी प्रतिवादियों के अलावा प्रतिवादियों के हित में पूर्ववर्तियों द्वारा गिरवी रखी गई थी; वादी के हित में पूर्ववर्तियों के साथ। भूमि को गिरवी रखने वालों द्वारा गिरवी रखने वाले से किराए पर लिया गया था और इस प्रकार यह उसके कब्जे में बनी रही। वर्ष 1922 में किसी समय, गिरवीदारों ने राजस्व अधिकारियों से संपर्क किया और कहा कि वे भूमि के मालिक थे और गिरवीदार के लिए इसके प्रतिकूल कब्जे में थे और भूमि के मालिक के रूप में उनके पक्ष में एक उत्परिवर्तन सत्यापित किया जाना चाहिए। राजस्व अधिकारी ने गिरवीदारों के दावे को स्वीकार कर लिया और 9 जून, 1922 के आदेश द्वारा उनके पक्ष में परिवर्तन को सत्यापित किया। उस आदेश के खिलाफ, भूपा, जो उस समय प्लेनरी के हित में पूर्ववर्ती थे, ने कलेक्टर के समक्ष इस आधार पर अपील दायर की कि उनका नाम रिकॉर्ड से नहीं हटाया जाना चाहिए था। 22 दिसंबर, 1922 को उनकी मंजूरी स्वीकार कर ली गई और गिरवीदारों के पक्ष में किए गए परिवर्तन को दरकिनार कर दिया गया। इस प्रकार पिछली प्रविष्टियों को पुनर्स्थापित किया गया।

(3) गिरवी रखने वाले मुसलमान थे जो पाकिस्तान चले गए थे जबकि वादी स्थानीय निवासी हैं। निकासी संपत्ति के अभिरक्षक ने निकासी ब्याज (पृथक्करण) अधिनियम, 1951 (जिसे पृथक्करण अधिनियम कहा गया है) की धारा 6 और 7 के प्रावधानों के तहत सक्षम अधिकारी को सूट में भूमि में गैर-निकासी हित से निकासी के हित को अलग करने के लिए स्थानांतरित किया। वादी सक्षम अधिकारी के समक्ष पेश हुए और बचाव में एक साधारण दलील दी कि गिरवी 1877 से पहले मौजूद थे, साठ वर्ष 1937 तक समाप्त हो गए थे और लिखित रूप से गिरवी को बुझा दिया गया था और वे 1947 में विभाजन से बहुत पहले भूमि के मालिक बन गए थे। सक्षम अधिकारी ने इस याचिका को स्वीकार कर लिया और उनके पक्ष में मामले का फैसला किया। बेदखली संपत्ति के अभिरक्षक की अपील पर, उक्त अधिनियम के तहत अपीलीय प्राधिकरण ने सक्षम अधिकारी के आदेश को उलट दिया कि वाद में भूमि उस अधिनियम की धारा 2 (घ) में उस अभिव्यक्ति के अर्थ के भीतर समग्र संपत्ति थी। इसके बाद वादी ने मूल मुकदमा

नं. 1957 का 336, विवादग्रस्त भूमि के अधिकार का दावा करता है और न्यायशास्त्र के अभाव के आधार पर उस अधिनियम के अधीन अपीलीय प्राधिकरण के आदेश की वैधता और वैधता पर प्रश्न उठाता है। ""...

(4) विद्वत विचारण न्यायालय ने निम्नलिखित मुद्दे तैयार किएः

1. क्या दीवानी अदालत के पास मुकदमे की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है?

2. क्या धारा 80, सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत नोटिस आवश्यक था और अभिरक्षक, निकासी संपत्ति को नहीं दिया गया है?

3. क्या वादी मूल बंधकधारियों के हित में उत्तराधिकारी हैं?

4. क्या वादी साठ वर्षों से अधिक समय से वाद भूमि के कब्जे में बंधक रहे हैं और 1947 या 1951 से पहले मालिक बन गए थे?

मुद्दा 2 और 3 का फैसला वादी के पक्ष में किया गया था जबकि मुद्दा 1 और 4 का फैसला एक साथ किया गया था और यह माना गया था कि बंधक 1947 या 1951 में अस्तित्व में था और संपत्ति समग्र थी क्योंकि गिरवी रखने वाले-निकासी का मुकदमे में भूमि में निकासी हित था। यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि पृथक्करण अधिनियम, दिनांक 8 अगस्त, 1957 के अधीन अपीलीय प्राधिकरण का आदेश विधिसम्मत और अधिकार के भीतर था। इस प्रकार वादी के वाद को विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा 26 दिसंबर, 1958 को खारिज कर दिया गया। वादी ने उस डिक्री के खिलाफ अपील दायर की जिसे 2 नवंबर, 1959 को वरिष्ठ अधीनस्थ न्यायाधीश, गुरगौरी द्वारा खारिज कर दिया गया था। फिर वादी ने R.S.A. दायर किया। इस न्यायालय में 1959 का 1894 जिसे 16 सितंबर 1969 को विद्वान मुख्य न्यायाधीश मेहर सिंह द्वारा स्वीकार किया गया था। लेटर्स पेटेंट के खंड 10 के तहत वर्तमान अपील भारत संघ और अभिरक्षक, निकासी संपत्ति द्वारा, विद्वत मुख्य न्यायाधीश की अनुमति प्राप्त करने के बाद उनके फैसले और डिक्री के खिलाफ दायर की गई है।

5.) अपीलार्थियों के विद्वान वकील द्वारा केवल दो बिंदुओं पर तर्क दिया गया है। पहला मुद्दा यह है कि पृथक्करण अधिनियम की धारा 20 के प्रावधानों को देखते हुए दीवानी अदालत को मुकदमे की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। वह भाग इस प्रकार हैः -

"20. (1) इस अधिनियम में अन्यथा स्पष्ट रूप से उपबंधित किए जाने को छोड़कर, कोई सिविल या राजस्व न्यायालय, जहां तक वह संयुक्त संपत्ति के किसी दावे से संबंधित है, जिसमें सक्षम अधिकारी को इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन निर्णय लेने का अधिकार दिया गया है, किसी भी वाद या कार्यवाही पर विचार नहीं करेगा और संयुक्त संपत्ति के संबंध में सक्षम अधिकारी द्वारा की गई या की जाने वाली किसी कार्रवाई के संबंध में कोई निषेधाज्ञा किसी सिविल न्यायालय या अन्य प्राधिकरण द्वारा नहीं दी जाएगी।

(2) इस अधिनियम के प्रारंभ में सिविल या राजस्व न्यायालय के समक्ष लंबित सभी वाद और कार्यवाहियां; जहां तक वे धारा 7 के अधीन सक्षम अधिकारी के समक्ष दायर किए गए किसी दावे से संबंधित हैं, इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान रोक लगाई जाएंगी।

(3) उपधारा (1) की कोई बात किसी सिविल या राजस्व न्यायालय को इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन किसी दावेदार को किए गए किसी संदाय या हस्तांतरित या सुपुर्द की गई संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार से संबंधित किसी वाद या कार्यवाही पर विचार करने से नहीं रोकेगी जिसका कोई अन्य दावेदार या अन्य व्यक्ति उस दावेदार के विरुद्ध, जिसे संदाय किया गया है या संपत्ति सुपुर्द या हस्तांतरित की गई है, प्रवर्तन करने के लिए विधि की उचित प्रक्रिया द्वारा हकदार हो सकता है।
इस धारा में केवल इतना कहा गया है कि संयुक्त संपत्ति के किसी भी दावे का निर्णय सक्षम अधिकारी द्वारा किया जाना है। सिविल या राजस्व अदालत द्वारा नहीं। इस धारा में यह नहीं कहा गया है कि कोई संपत्ति समग्र है या नहीं, यह भी अकेले उक्त अधिनियम के तहत अधिकारियों द्वारा तय किया जाना है और कोई सिविल या राजस्व अदालत संपत्ति के स्वरूप के संबंध में किसी भी मुकदमे या कार्यवाही पर विचार नहीं कर सकती है। मामले के उस दृष्टिकोण में, यह धारा यह तय करने के लिए सिविल न्यायालय की अधिकारिता को बाहर नहीं करती है कि कोई संपत्ति एक समग्र संपत्ति है या नहीं। अपीलार्थियों के लिए विद्वान वकील कस्टोमैन, इवैक्यू प्रॉपर्टी, पंजाब और अन्य बनाम जाफरान बेगम[1] में सर्वोच्च न्यायालय के उनके लॉर्डशिप के फैसले पर निर्भर करता है, जो स्पष्ट रूप से अलग है। उनके अधिपतियों का निर्णय निर्वासित संपत्ति प्रशासन अधिनियम (1950 का 31) की धारा 46 के संबंध में है, जिसकी भाषा पृथक्करण अधिनियम की धारा 20 की भाषा से पूरी तरह से अलग है। निर्वासित संपत्ति प्रशासन अधिनियम की धारा 46 निम्नानुसार है I

(4) इस अधिनियम में अन्यथा स्पष्ट रूप से उपबंधित किए जाने के सिवाय, किसी सिविल या राजस्व न्यायालय को अधिकारिता नहीं होगी-(क) किसी ऐसे प्रश्न पर विचार करने या न्यायनिर्णयन करने के लिए कि क्या कोई संपत्ति या कोई अधिकार या किसी संपत्ति में हित निकासी संपत्ति है या नहीं है, या (ख) इस अधिनियम के अधीन अभिरक्षक द्वारा की गई किसी कार्रवाई की वैधता पर प्रश्न करने के लिए; या (घ) किसी ऐसे मामले के संबंध में जिसे अभिरक्षक-जनरल या अभिरक्षक को इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन निर्धारित करने का अधिकार है।
धारा के खंड (क) में यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि किसी सिविल या राजस्व न्यायालय को इस प्रश्न पर निर्णय लेने की अधिकारिता नहीं होगी कि क्या कोई संपत्ति अन्य मामलों के अलावा निकासी संपत्ति है या नहीं। ऐसे शब्द पृथक्करण अधिनियम की धारा 20 में नहीं पाए जाते हैं और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि सिविल न्यायालय की उस वाद का विनिश्चय करने की अधिकारिता, जिसमें से यह अपील उद्भूत हुई है, को धारा 20 आई. बी. आई. डी. द्वारा अपदस्थ कर दिया गया था। इसलिए, विद्वान वकील द्वारा तर्क दिया गया पहला बिंदु खारिज कर दिया गया है।

[1] 1968 P.L.E. 1,

(6) दूसरा मुद्दा जो तर्क दिया गया है वह यह है कि दस्तावेज, डी. 1 और डी. 2, भारतीय सीमा अधिनियम, 1908 की धारा 19 के अर्थ के भीतर पावती के बराबर हैं; और उस तारीख से अवधि बढ़ा दी गई जिस पर वे दस्तावेज लिखे गए थे। समय के क्रम में पहला दस्तावेज़ है, प्रदर्शनी डी. 2, जो ऊपर उल्लिखित उत्परिवर्तन के क्रम की एक प्रति है। राजस्व अधिकारी ने पटवारियों की रिपोर्ट पर मामला उठाया और निर्देश दिया कि भूपा को पूछताछ जारी की जानी चाहिए। भूपा से प्राप्त उत्तर की प्रति को मामले में एक प्रदर्शनी के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया है, लेकिन राजस्व अधिकारी के आदेश में उस उत्तर के संदर्भ पर भरोसा किया गया है, जिसके बारे में भूपा ने 8 फरवरी, 1922 को अपने बयान में कहा था कि धन सिंह और अन्य लोगों ने उनकी ओर से भूमि पर खेती की और उन्हें उपज के अपने हिस्से का भुगतान किया। बयान का संदर्भ देने के बाद, राजस्व अधिकारी ने कहा कि पिछले बारह वर्षों के दौरान भूमि पर भूपा का कब्जा साबित नहीं हुआ था और इसलिए, उसका नाम हटा दिया जाना चाहिए। इस दस्तावेज़ को भूप द्वारा स्वीकृति नहीं कहा जा सकता है क्योंकि इस पर उनके हस्ताक्षर नहीं हैं। यह केवल राजस्व अधिकारी का आदेश है न कि भूपा का बयान। अतः यह भारतीय सीमा अधिनियम, 1908 की धारा 19 के अर्थ के अंतर्गत स्वीकृति नहीं हो सकती।

(7) आदेश के विरुद्ध (प्रति प्रदर्शनी डी. 2) भूपा ने कलेक्टर, गुड़गांव के समक्ष एक अपील दायर की, जिसमें उन्होंने बंधक के रूप में अपनी स्थिति के बारे में एक शब्द भी नहीं कहा। अपील के ज्ञापन में विभिन्न आधारों में केवल इतना कहा गया है कि प्रतिवादियों के पास भूमि का स्वामित्व मालिकों के रूप में नहीं बल्कि किरायेदारों के रूप में था। उन्होंने उन्हें बाहर निकालने का नोटिस जारी किया था और उन्होंने उस नोटिस को रद्द करने के लिए सहायक कलेक्टर I ग्रेड की अदालत में मुकदमा दायर किया था। उन्हें 28 अप्रैल, 1922 के आदेश द्वारा दीवानी अदालत में उपचार लेने का निर्देश दिया गया था। भूपा ने आगे कहा कि किरायेदार उनके खिलाफ प्रतिकूल कब्जे का दावा नहीं कर सकते थे (the landlord). उन्होंने उत्परिवर्तन तय करने के लिए राजस्व अधिकारी के अधिकार क्षेत्र को भी चुनौती दी। इस प्रकार अपील के आधारों को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि भूमि के गिरवीदार के रूप में उनकी स्थिति के संबंध में कोई स्वीकृति नहीं दी गई थी और इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि इस दस्तावेज द्वारा उन्होंने खुद को वाद में भूमि का गिरवीदार स्वीकार किया। चूंकि यह दस्तावेज़ स्वीकृति के बराबर नहीं है, इसलिए साठ वर्ष की अवधि को बढ़ाया नहीं जा सकता है।

(8) अपीलार्थियों के विद्वत वकील ने मेसर्स में उच्चतम न्यायालय के उनके लॉर्डशिप के निर्णय को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत किया है। लक्ष्मीरतन कॉटन मिल्स कं, लिमिटेड बनाम भारतीय एल्यूमीनियम निगम लिमिटेड (2) यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि दोनों दस्तावेज। डी. 1 और डी. 2 को एक साथ पढ़ने पर प्रदर्शित करें, जो भूप द्वारा बंधक के रूप में उनकी स्थिति की स्वीकृति के बराबर है। हालाँकि, हम पाते हैं कि उनके प्रभुओं का निर्णय अपीलार्थियों के लिए विद्वान वकील की मदद नहीं करता है। उस निर्णय में जो कुछ भी अभिनिर्धारित किया गया था, वह यह है कि जिस कथन पर पावती की याचिका स्थापित की गई है, वह वचन के बराबर नहीं है और दायित्व की सटीक प्रकृति या विशिष्ट चरित्र को इंगित करने की आवश्यकता नहीं है। हालाँकि, यह एक वर्तमान निर्वाह दायित्व से संबंधित होना चाहिए और उदाहरण के लिए, एक देनदार और एक लेनदार के रूप में पक्षों के बीच न्यायिक संबंध के अस्तित्व और इस तरह के न्यायिक संबंध को स्वीकार करने के इरादे को इंगित करना चाहिए। इस तरह का

इरादा स्पष्ट शब्दों में होने की आवश्यकता नहीं है और प्रवेश की प्रकृति और आसपास की परिस्थितियों से निहितार्थ से अनुमान लगाया जा सकता है। इस मामले में आसपास की परिस्थितियाँ अपीलार्थियों के खिलाफ जाती हैं। कुछ स्थानों पर राजस्व अधिकारी के आदेश में भूपा को बंधक के रूप में वर्णित किया गया था और जिन व्यक्तियों ने उत्परिवर्तन के लिए आवेदन किया था उन्हें बंधक बनाने वाले के रूप में वर्णित किया गया था। भूपा ने अपनी अपील में एक बंधक के रूप में अपनी स्थिति का उल्लेख नहीं किया, बल्कि खुद को अपने किरायेदारों के लिए एक मकान मालिक के रूप में अपनी स्थिति तक सीमित रखा। अपील के आधारों से यह बहुत स्पष्ट है कि उन्होंने उन्हें निष्कासन का नोटिस जारी किया था, जिसे रद्द करने के लिए उन्होंने राजस्व न्यायालय में मुकदमा दायर किया था और उन्होंने कहीं भी खुद को भूमि का बंधक स्वीकार नहीं किया था। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि आसपास की परिस्थितियों के आलोक में भूप ने तत्कालीन बंधककर्ताओं के लिए एक बंधक के रूप में अपनी स्थिति को स्वीकार किया। जैसा कि हम प्रदर्शनी डी. 1 को पढ़ते हैं, उन्होंने अपील में एक गिरवीदार के रूप में अधिकारों का दावा करने से सावधानीपूर्वक परहेज किया और खुद को पूरी तरह से उस अपील के प्रतिवादियों के लिए मकान मालिक की अपनी स्थिति तक सीमित रखा, जिसे उन्होंने अपने किरायेदारों के रूप में वर्णित किया। उनके प्रभुओं के शब्दों में बंधक और बंधक बनाने वालों के न्यायिक संबंध की कोई स्वीकृति नहीं थी और न ही यह स्वीकार करने का कोई इरादा था। पावती के रूप में किसी अन्य दस्तावेज का अनुरोध नहीं किया गया है। साठ साल की अवधि 1947 से पहले समाप्त हो गई थी और विस्थापितों की भूमि में कोई रुचि नहीं बची थी। साठ वर्षों की समाप्ति के बाद, वादी या उनके पूर्ववर्ती भूमि के पूर्ण मालिक बन गए थे। इस प्रकार यह एक समग्र संपत्ति नहीं थी और पृथक्करण अधिनियम के तहत अधिकारियों के पास इस मामले में अधिकार क्षेत्र था। हमारी राय में, R.S.A में विद्वान मुख्य न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के साथ कोई कमजोरी नहीं पाई जा सकती है। 1959 का 1894।

(9) ऊपर दिए गए कारणों से, इस अपील में कोई योग्यता नहीं है जिसे खारिज कर दिया जाता है, लेकिन पक्षों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और कि सी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

पीयूष चौधरी
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
जगाधरी, हरियाणा